अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड 2, अंक 2, अप्रैल - जून 2024

हिन्दी साहित्य के इतिहास में संत कबीर

डॉ. सुमन सिंह

लेख इतिहास :प्राप्त :01 अप्रैल 2024, स्वीकृत :10 अप्रैल 2024, ऑनलाइन प्रकाशित :15 अप्रैल 2024"

एक ऐसे विवादास्पद कवि हैं, जिनकी तरफ विद्वानों का ध्यान बहुत समय बाद केन्द्रित हुआ। यह सर्वविदित सत्य है कि कबीरदास सन्त पहले और कवि बाद में सिद्ध हुए । काब्य रचना के उद्देश्य से उन्होंने कहीं भी कविता नही की । उन्हें न तो शास्त्रीय ज्ञान था और न तो वे शास्त्रीय मान्यताओं का अवलोकन ही किये थे। फिर भी उनके काव्य में उनकी आत्मानुभूति के कारण काव्यत्व स्वतः आ गया है। किसी काव्य-रचना के लिये भारतीय दृष्टि से प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को अनिवार्य काव्य हेतु स्वीकार किया गया है।

इसके अनुसार कबीरदास में भरपूर प्रतिभा विद्यमान थी और वे प्रतिभा के बल पर ही समाज में व्याप्त कुरीतियों, ब्रम्हचारों, आडम्बरों आदि पर करारा चोट करते हैं। किन्तु आचार्य-परम्परा के आलोचकों ने उन्हें कवि-रूप में महत्व नहीं दिया है। इस बात के बावजूद भी हिन्दी साहित्य के प्रत्येक इतिहास में कबीरदास का उल्लेख किया गया है और उनके विचारों और भावनाओं का अध्ययन-अध्यापन किया गया है। उनके काव्यत्व को भी किसी न किसी रूप में स्वीकार किया ही गया है।

डॉ0 रामचन्द्र तिवारी के अनुसार-‘‘कबीर के अध्येताओं और समीक्षकों ने उनकी वाणी में निहित कुछ ऐसी विशेषताओं को लक्षित किया है, जिसके आधार पर कबीर को कवि-रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हो सकती है।’’1

हिन्दी साहित्य के मर्मी आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कबीर के सम्बन्ध में कहते हैं कि - ‘‘कबीर की रचना उपदेश को देती है, पर भावोन्मेष नहीं लाती। उनके उपदेशों का अत्यन्त ऊंचा मानकर भी उसे ‘‘साहित्य या काव्य कहने मे बहुतों को संकोच होता है।’’ उपरोक्त कथनों से ऐसा प्रतीत होता है कि

डॉ0 रामचन्द्र तिवारी, कबीर मीमांसा, पृष्ठ-135
शुक्ल जी की धारण कबीर के प्रति उपेक्षा भाव ही था। उन्होंने अपना निर्णय भी दिया है कि ‘‘इस शाखा (ज्ञानाश्रयी शाखा-यह नाम भी शुक्ल जी का दिया हुआ है, जो भ्रामक है) की रचनायें साहित्यिक नही हैं- फुटकल दोहों या पदों के रूप में है जिनकी भाषा-शैली अधिकतर अव्यवस्थित और उटपांग हैं।’’2 उन्होंने इतना ही नही कहा उनकी रचना को ‘‘धार्मिक रचना’’ कहकर वहिष्कृत करने का प्रयत्न भी किया।

इतने के बाद भी आचार्य शुक्ल का सूक्ष्मति सूक्ष्म आलोचक दृष्टि ने कबीर की प्रतिभा को स्वीकारा है और कबीर के सम्बन्ध में लिखा भी है - ‘‘यद्यपि वे पढ़े-लिखे न थे, पर उनकी प्रतिभा बड़ी प्रखर थी, जिससे उनके मुख से बड़ी चुटीली और व्यंग्य चमत्कारपूर्ण बातें निकलती थीं। इनकी उक्तियों में विरोध और असम्भव का चमत्कार लोगों को बहुत आकर्षित करता था।’’3

अतः आचार्य शुक्ल के कथन में विरोधाभास दिखायी देता है क्यों कि एक तरफ से कबीर को कवि मानने से इन्कार करते हैं और दूसरी तरफ उनकी प्रतिभा को स्वीकार भी करते हैं, जो एक कवि के लिये अनिवार्य है।

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-66
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-80

शुक्ल जी का कथन है कि - ‘‘भाषा बहुत परिष्कृत और परिमार्जित न होने पर भी कबीर की उक्तियों में कहीं-कहीं विलक्षण प्रभाव और चमत्कार है। प्रतिभा उनमें बहुत प्रखर थी। इसमें सन्देह नही।’’1

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर से अत्यन्त प्रभावित हैं। उनका कहना है कि कबीरदास जिस समय अवतरित हुए थे, उस समय भारत की सांस्कृतिक अवस्था बिल्कुल ध्वस्त होने के कगार पर पहुंच गयी थी। प्राचीन हिन्दू-विश्वासपूर्ण रूप से वर्तमान था, पर शास्त्रज्ञान प्राप्त करने के लिये जनता में साहस नहीं था और इनके लिये ज्ञान का दरवाजा अवरूद्ध हो चुका था। किन्तु उसी समय कबीरदास ने अवतरित होकर अपने प्रतिभा और आत्मज्ञान के बल पर जनता की बागडोर सम्भालने का प्रयत्न किया।

आचार्य द्विवेदी ने कबीर के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है- ‘‘वे शास्त्र के दॉव-पेंच से अनभिज्ञ थे, इसलिए पद-पद पर दार्शनिक की भॉति ‘‘ननु’’ लगाकर अपर पक्ष की सम्भावना की कल्पना नहीं कर सकते थे। इसीलिए उनकी उक्तियों तीर की भॉति सीधे हृदय में चुभ जाती है। यह विश्वास उनमें इतनी अधिक मात्रा में था कि कभी-कभी पण्डितों को उसमें गर्वोक्ति की गन्ध आती है। उनमें युग प्रवर्तक का विश्वास था और लोकनाय की हमदर्दी। इसीलिए वे एक नया युग उत्पन्न कर सके।’’2

कबीर ही एक ऐसे निर्भीक कवि हैं, जिन्हें कुछ भी कहने में झिझक नहीं था, न ही किसी का डर । आचार्य द्विवेदी भी इस बात को स्वीकार

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृश्ठ-80
2. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी , हि न्दी साहित्य की भूमिका, पृश्ठ-80

करते हुए आगे कहते हैं कि -‘‘उनकी प्रेम और भक्ति में वह गलदश्रु भावुकता नहीं थी जो जरा-सी ऑच से पिघल जाय। यह प्रेमज्ञान द्वारा नीति और श्रद्धा द्वारा अनुगमित था। वियोग की बात भी वे उसी मौज से कह सकते थे, जिस तरह संयोग की। उनका मन जिस प्रेमरूपी मदिरा से मतवाला था, वह ज्ञान के महुवे और गुड़ से बनी थी, इसीलिए अन्ध श्रद्धा, भावुकता और हिस्टीरिक प्रेमोन्माद का उसमें एकान्त अभाव था। भक्ति के अतिरेक में उन्होंने कभी अपने को अति पतित नहीं समझा । सिर से पैर तक वे मस्तमौला थो, वे परवाह, दृढ़, उग्र।’’1

द्विवेदी जी के अनुसार कबीर अपने काब्य मे तीन बातों को उल्लिखित करते हैं - ज्ञानी मनुष्य और साधकों को लक्ष्य बनाकर और सामाजिक साधारण जनता को केन्द्रित करके तथा अपने मौज रूप में। द्विवेदी जी भी एक तरफ उन्हें पढ़े-लिखे नही मानते थे, किन्तु दूसरी तरफ उनकी रचना में कवित्व को पूर्णरूपेण स्वीकार भी करते हैं - ‘‘वे पढ़े-लिखे नहीं थे, छन्दशास्त्र और अलंकार के ज्ञान से वंचित थे। कविता करना उनका लक्ष्य नहीं था, फिर भी उनकी उक्तियों मे कवित्व की ऊँची से ऊँची चीज प्राप्य हैं।

वे साधना के क्षेत्र में युग-गुरू थे और साहित्य के क्षेत्र मे भविष्य के स्रष्टा । संस्कृत के ‘कूप-जल’ को छुड़ा कर उन्होंने भाषा के ‘बहते नीर’ में सरस्वती को स्नान कराया।’’2

डॉ0 रामचन्द्र तिवारी ने आचार्य द्विवेदी के सम्बन्ध में अपना मत प्रस्तुत करते हुए कहा है - ‘‘कहना न होगा कि आज भी कबीर की जो

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृश्ठ-80
2. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृश्ठ-80

‘छवि’हिन्दी-साहित्य की नयी पीढ़ी के पाठकों के मन में विद्यमान है, उसे द्विवेदी जी ने इसी पुस्तक के माध्यम से रूपायित किया है। द्विवेदी जी का पण्डित और शोधक रूप यहां भी विद्यमान है। उनके समीक्षक रूप की भार-वरता सन्देह से परे है। कबीर का योगियों से सम्बन्ध, उनकी योगपरक उलटवासियों की व्याख्या और उनका मूल उत्स, कबीर की भक्ति, उनके द्वारा ब्रह्मचार का खण्डन, इन सभी बातों क ओर पूर्ववर्ती विद्वानों ने हमारा ध्यान आकृष्ट किया था। किन्तु कबीर के प्रति जो सहानुभूति द्विवेदी जी के मन में है और जिस अंकुठ भाव से उन्होंने (परे विश्वास, निष्ठा और शक्ति के साथ) कबीर के महत्व को स्वीकारा और व्यक्तित्व को उभारा है, वह अन्यतम है। उन्होंने कबीर और उनसे सम्बद्ध साहित्य का मन्थन करने के बाद जो निर्णय दिये हैं, वे आज भी उसी रूप में मान्य है।’’1

कबीरदास हिन्दी साहित्य के एक अद्‌वितीय व्यंग्य चमत्कार युक्त कवि हैं। उनकी भाषा अत्यसन्त व्यंग्य-वैचित्र्य का द्‌योतक है। वे अपनी भाषा के बल पर ही समाज में व्याप्त सभी बुराईयों पर सीधे चोट करते हैं। इसी प्रकार द्‌विवेदी जी भी उनकी भाषा और व्यंग्य पर कहते हैं- ‘‘सच पूछा जाय तो आज तक हिन्दी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्य लेखक पैदा ही नही हुआ। उनकी साफ चोट करने वाली भाषा, बिना कहे भी कुछ कह देने वाली शैली और अत्यन्त सादी, किन्तु अत्यन्त तेज प्रकाशन-भंगी, अनन्य साधारण है। इस कदर सहज और सरस ढंग से चकनाचूर करने वाली भाषा कबीर के

1. आचार्य रामचन्द्र तिवारी भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र तथा हिन्दी आलोचना, पृष्ठ-218,

पहले बहुत कम दिखायी दी है। व्यंग्य वह है जहां कहने वाला अधरोष्ठों से हँस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो और फिर भी कहने वाले को जवाब देना अपने को और भी उपहास्पद बना लेना हो जाता है।’’1

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक ‘‘उत्तर भारत की संत परम्परा’’ मे कबीर के साहित्य पर लिखा है और कहा है कि ‘‘कबीर साहब ने ज्ञानार्जन अधिकतर सत्संग द्‌वारा किया था और इन्हें पढ़ने लिखने की आवश्यकता नही पड़ी थी। फिर भी इनकी ‘बावन अरवरी’ जैसे रचनाओं को देखने से प्रतीत होता है कि इन्हें नागरी-अक्षरों की वर्णमाला अवश्य विदित थी।’’2

कबीरदास को एक कवि न मानकर एक भक्त के रूप में मानने की परम्परा आरम्भिक काल से ही चली आ रही है। इनके समय के संतों ने भी इन्हें एक भक्त के श्रेणी में रखने का प्रयत्न किया है। लेकिन कुछ लोगों को ऐसी भी मान्यता मिलती है जिसे चतुर्वेदी जी ने उद्‌घाटित करने का प्रयास किया है- ‘‘ये भक्त न होकर वास्तव में एक शुद्‌ध विचारक या दार्शनिक थे। इनके अनेक सिद्‌धान्तों मे शांकर-अद्‌वैतवाद की गंध पाकर वे अनुमान करते हैं कि वे एक पूरे ‘वेदान्ती’ थे तथा इनकी बहुत सी रचनाओं के वेदान्तपरक अर्थ करते हुए भी दीख पड़ते हैं। इसी प्रकार इनकी कुछ उपलब्ध बानियों में योग-साधना की बातें पाकर इन्हें एक पूर्ण योगी या कम से कम नाथ-पंथी सिद्‌ध करने की ओर भी लोग प्रवृत्त होते हैं। इसके विपरीत

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, कबीर साहित्य की परक, पृष्ठ-13, 14
2. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, उत्तर भारत की सत परम्परा-174

इनके विषय मे केवल इतना भी कहना मिलता है कि ये एक सच्चे सुधारक मात्र थे, जिन्होंने अपने समय की प्रचलित अनेक धार्मिक तथा अनेक सामाजिक बुराईयों की खरी आलोचना की और उन्हें दूर करने की चेष्टा में ये अपने जीवन भर निरत रहे।’’1

कबीर साहब की विचाराणायें उनकी स्वयं अनुभूति पर निर्भर थी। उनका कहना था कि मै सत्यज्ञान के लिए किसी ज्ञानी पुरूष या किसी ग्रन्थ के समर्थन की आवश्यकता नही समझता। मैने अपने स्वयं अनुभूति के बल पर प्रभू का साक्षात्कार किया है।

इस सम्बन्ध में आचार्य परशुराम चतुर्वेदी का मत उद्‌धृत है ‘‘वास्तव में कबीर साह की विचार पद्‌धति की भित्ति स्वानुभूति पर ही खड़ी है और इसी कारण ये जहां कभी भी अवसर पाते हैं, वहां निजी अनुभव के महत्व का मान करते नही अघाते, न कभी परावलम्बन द्‌वारा प्राप्त तथा कथित ज्ञान की निन्दा करने से ही चूकते हैं। इनका अपने विषय में भी यही कहना है कि मैने पराश्रय ग्रहण करने की अभिलाषा से कहीं भी दौड़-धूप नहीं लगायी। मेरे स्वयं विचार करते-करते अपने मन ही मन सत्य का प्रकाश हो उठा और मुझे उसकी उपलब्धि हो गयी।’’2

बैजनाथ प्रसाद शुक्ल ने कबीर को एक कवि रूप मे प्रतिष्ठित करते हुए उनके गुण और अवगुण दोनो पर विचार किया है। इन्होंने भी कबीर की रचनाओं मे अलंकार, छन्द और व्यापक सम्बन्धी कमियों का दर्शाया

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, उत्तर भारत की संत परम्परा, पृष्ठ-80
2. कबीर ग्रन्थावली, पद 23, पृष्ठा-96

है, पर इनके काव्य और कवि रूप के लिए इनकी अदम्य क्षमता-युक्त वाली को ही काव्य का प्राण बताया है और कहा है- ‘‘काव्य की सरसता, सहजता एवं गहन अनुभूति के साथ-साथ सत्यांवेषण की क्षमता ही सन्त काव्य की विशेषता है। इस साहित्य में सन्तों के महान व्यक्तित्व, कोमल-तीखी वाणी, निर्मल हृदय, पवित्र विचार, गम्भीर अनुभव एवं सरस-कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति अभिनवता के साथ चित्रित हुई है। सन्त काव्य के समस्त कवियों मे कबीर सर्वाधिक प्रतिभाशाली और मौलिक कवि हैं। कबीर यशः प्रार्थी कवि न थे, न उन्होंने कहीं काव्य-रचना की प्रतिभा ही ली थी, न उनमें कविता लिखने की प्रतिभा ही विशेष थी, न उन्हें अलंकार शास्त्र या पिंगल का ज्ञान था, फिर भी उनकी अद्भूत वाणी काव्य है, और अध्ययन अनुशीलन का विषय है। उत्कृष्ट एवं प्रबल काव्यानुभूति के कारण वह सरलता से महाकवि कहलाने के अधिकारी हैं।’’1

किसी भी काव्य और उनके कवि को स्वीकार करने के लिये कवि की सहृदयता ही उसका प्रमाण सिद्ध होती है। कबीर के लिये यह कहने की आवश्यकता ही नही है कि वे एक महान कवि हैं। उनके कवि रूप को देश तथा विदेशों में भी स्वीकार किया गया है। लेकिन कुछ आलोचक उनके कवि रूप को अस्वीकार भी करते है, इस सम्बन्ध में बैजनाथ प्रसाद शुक्ल ने अपना सुझाव दिया है-‘‘किसी रचना विशेष को स्वीकार करने में तथा-कथित रचना के रचयिता को कवि मानने में सहृदय ही प्रमाण हुआ करते हैं। कबीर के सम्बन्ध में यह निर्णय देने की आवश्यकता ही नहीं कि वह उच्च कोटि के कवि हैं, क्योंकि देश के ही नहीं, विदेश तक के काव्य-रसिकों तथा भावकों ने इसे मुक्त कण्ठ

1-बैजनाथ प्रसाद शुक्ल, कबीरः एक नव्य बोध, पृष्ठ-87

से स्वीकार किया है। फिर भी कुछ आलोचक रगीन चश्मा लगाने वाले हैं, जिन्होंने इस बात का व्रत लेख रखा है कि चिन्तामणि त्रिपाठी, केशव, मतिराम, जसवन्त सिंह, बिहारी तथा रसलीन ही कवि हैं और उनकी सृजित रचनायें काव्य कहलाने योग्य है।’’1

कबीर युग-चेतना के कवि हैं। इनके काव्य मे देश की राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक युगीन परिस्थितियांे को निहारा जा सकता है। परिस्थितियों के फलस्वरूप इनका काव्य सृजित अनुभूति प्रधान काव्य है। अत जन-जन को प्रभावित करता है। इसे लोक साहित्य की संज्ञा नही दी जा सकती है, परन्तु यह जनकाव्य अवश्य है। इसके काव्य का प्रयोजन सामान्य मानव है, जो सभी क्षेत्रों से शोषित प्रताड़ित एवं सर्वहारा है, अतएव इसमें मानव जीवन के सभी पक्षों पर गहराई से विचार किया गया है। पथ-भ्रष्ट भटकते हुए, गुमराह समाज को सुमार्ग पर लाना कबीर का उद्देश्य है।‘‘2

कबीर का काव्य एक तरह से जन काव्य है। उसमें कला-पक्ष की भले ही शिथिलता है, लेकिन उनका भाव-पक्ष इतना उन्नतम एवम् उत्कृष्ट है कि वह सहज ही पाठकों को यह स्वीकार करने के लिये बाध्य कर देता है कि वह हिन्दी साहित्य के एक प्रतिनिधि कवि हैं। इसके अतिरिक्त वे संत-काव्यधारा के महान् प्रवर्तक भी हैं।

कबीर ने अपनी कविता का शास्त्रीय ज्ञान और सौन्दर्य चमत्कार प्रदर्शित करने के लिये रचना नहीं की । उन्होंने तो धर्म के वास्तविक रूप,

1. बैजनाथ प्रसाद षुक्ल, कबीर एक नव्य बोध, पृश्ठ-87
2. बैजनाथ प्रसाद षुक्ल, कबीर एक नव्य बोध, पृश्ठ-88

स्वरूप को प्रतिपादित करने के लिए अपना मुखर खोला, जिससे अज्ञान जनता को सही ज्ञान का परिहार हो सके और जनता जागृत हो अपनी स्वयं रक्षा करें। कबीर पहले संत रूप में ही थे, परन्तु अपनी कविता के आधार पर कवि सिद्ध हो गये। डॉ0 राम कुमार वर्मा के शब्दों में कबीर की कविता का रूप इस प्रकार है- ‘‘कबीर संत पहले थे, कवि बाद में। उन्होंने कविता का चमत्कार प्रदर्शित करने क लिए कंठ मुखरित नहीं किया, उन्होंने धर्म के व्यापक रूप को सुबोध बनाने के लिये काव्य नियोजित किया। अतः कबीर में धार्मिक दृष्टिकोण प्रधान है, काव्यगत दृष्टिकोण गौण। यह दूसरी बात है कि जीवन में गहरी पैठ होने के कारण उनकी कविता में जीवन-क्रान्ति सहस्रमुखी हो उठी । उससे धर्म प्राणमय होकर अनेक चित्रों मे साकार हो गया। संत कबीर कवि कबीर हो गये, यद्यपि संत ने न तो भाषा के रूप मे संवारा और न पिंगल की मात्रिक और वार्णिक शैली का अनावश्यक अनुकरण किया। गेय पदों के रूप में

उन्होने कविता कही और जनता ने उसमे अपना कंठ मिला दिया। जनवाणी के रूप मे ये पद समाज मे संचारित हो गये। कबीर ने पुस्तक-ज्ञान' का तिरस्कार किया था, अतः स्वयं उन्होंने किसी ग्रन्थ की रचना नहीं की।''1

डॉ0 पारसनाथ तिवारी ने कबीर के भाव-क्षेत्र पर भी अपनी नजर डाली है और इसे इस प्रकार उद्धृत किया है- ''कबीर का भाव क्षेत्र असीम, अनन्त, ब्रम्हानन्द में आत्मा का साक्षीभूत होकर सम्मिलन करने का क्षेत्र है- वह आसानी से पकड़ में आने वाली चीज नही है, यह बेहद्दी मैदान है। कबीर का कार्य

1. डॉ0 राम कुमार वर्मा, संत कबीर, पृष्ठ-6

बड़ा कठिन था, क्यों कि उन्हें अरूप और अकथ्य को रूप और अभिव्यक्ति प्रदान करना था। काव्यशास्त्र के आचार्य इसे कवि की सबसे बड़ी शक्ति बताते हैं। महाकवि भवभूति ने 'उत्तर राम चरित' में वाणी या काव्य को अमृतरूपा कहते हुए 'आत्मा की कला माना है। रूप के द्वारा अरूप की अभिव्यक्ति, कथन के द्वारा अकथ्य का ध्वनन उत्कृष्ट काव्य में ही हो सकता है। ऐसी ही अमृतरूपा वाणी या कविता की साधना कबीर ने की। उसमे छन्द, गुण, रस, अलंकार आदि काव्य के वाहय उत्पादनों की खोज करना व्यर्थ है।

''वन्देमहि च तां वाणीं अमृतां आत्मनः, कलाम।''1

1. भवभूति, उत्तर रामचरितम् 1/1 (प्रथम अध्याय का प्रथम श्लोक)।